राष्ट्र सेवा दल – पंचसूत्र

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

लेखक विनय सावंत

प्रकाशक

वाङ्.मय विभाग,

राष्ट्र सेवा दल

राष्ट्र सेवा दल – पंचसूत्र

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

लेखक

विनय सावंत

हिंदी अनुवाद

डॉ. नीला बोर्वणकर

प्रकाशक

वाङ्.मय विभाग,

राष्ट्र सेवा दल

राष्ट्र सेवा दल – पंचसूत्र

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

लेखकः विनय सावंत

हिंदी अनुवाद : डॉ नीला बोर्वणकर

राष्ट्र सेवा दल

प्रथम आवृत्ति

12 नवंबर 2002

प्रकाशन वाङ्.मय विभाग

राष्ट्र सेवा दल,

साने गुरूजी स्मारक

सिंहगड रस्ता – पुणे– 30

अक्षर योजना :

सौ. प्रीति पराग शाह

(020) 4330037

मुद्रक : डायनामिक

ए– 5/30 रक्षालेखा सोसायटी,

दत्तवाडी, पुणे –30

मूल्य : रू. 20

प्रस्तावना

जनतंत्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्रवाद और वैज्ञानिक दृष्टिकोण राष्ट्र सेवा दल के पंचसूत्र हैं। इन पंचसूत्रों द्वारा स्पष्ट दिशा निर्देशन होता है कि संघर्षशील समाजवादी संगठन अर्थात राष्ट्र सेवा दल क्या करना चाहता है? पंचसूत्र पर पाँच छोटी किताबें प्रकाशित करने का इरादा राष्ट्र सेवा दल का है। इनमें से जनतंत्र, राष्ट्रवाद एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण ये किताबें क्रमशः प्रा. विकास देशपांडे (महामंत्री), प्रा. सुभाष वारे (राष्ट्रीय संघटक) तथा विनय सावंत (सचिव, महाराष्ट्र) ने लिखी हैं। इन लेखकों ने बहुत श्रमपूर्वक विषयानुसार व्यापक संदर्भों को समेटा है। इन सभी मूल्यों को आज के ताजे संदर्भों के अनुसार प्रस्तुत करने की कोशिश जानबूझकर की है। मेरा विश्वास है कि इन किताबों के अध्ययन से सेवा दल सैनिकों के विचारविश्व में वृद्धि होगी। राष्ट्र सेवा दल के अलावा अन्य पाठकों के लिए भी ये किताबों उपयुक्त सिद्ध होंगी। अन्य दो किताबें शीघ्र ही उपलब्ध करा देने की कोशिश जारी है। इतना ही नही ंतो, सेवा दल सैनिकों को अपनी शाखाओं में तथा शिबिरों में उपयुक्त सिद्ध हो पाए, ऐसे वैचारिक साहित्य का विमाचन करने की इच्छा वाङ्मय विभाग की है। राष्ट्र सेवा दल के कार्य का विस्तार हो, इसलिए ये पुस्तकें हिंदी भाषा में प्रकाशित की जा रही हैं। मेरा अपना मानना है कि महाराष्ट्र के सैनिकों को हिंदी भाषा की किताबें समझने में कोई दिक्कत नहीं आएगी। इन पुस्तकों के लेखकों को मैं धन्यवाद ज्ञापित करना चाहता हूँ।

एस.एम.जन्मदिन

12 नवंबर 2002

भाई वैद्य

अध्यक्ष,

राष्ट्र सेवा दल

अनुक्रम

1. वैज्ञानिक दृष्टिकोण
2. विज्ञान सृष्टि तथा दृष्टि
3. वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने से लाभ
4. निश्चित प्रश्न विनम्र उत्तर
5. विद्यमान प्रश्न तथा विज्ञान

❖ वैज्ञानिक दृष्टिकोण

भारतीय संविधान तथा राष्ट्र सेवादल का अभिप्रेत ध्येय है– समता पर आधारित शोषणरहित नव समाज की निर्मिति। अगर समाज के सभी स्त्री–पुरूषों ने जनतंत्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि आदर्श मानवी मूल्यों का जीवन–मूल्य के रूप में अंगीकार किया तो ही समताधिष्ठित नव समाज निर्मिति की प्रक्रिया गतिशील होगी।

भारतीय संविधान ने अपेक्षा व्यकत की है कि हर भारतीय नागरिक अपने दैनिक जीवन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का स्वीकार करे। वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अवलंब भारतीय नागरिकों का मूलभूत कर्तव्य माना गया है।

प्रंतु 12 वीं शती के आज के जनजीवन का चित्र इसके विपरीत है। अपने दैनंदिन जीवन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अंगीकार करने वाले व्यक्तियों की संख्या अत्यल्प है। बल्कि गणेश जी के दुग्धप्रशन की वंदना सिर्फ एक घंटे के अंदर ही दुनियाभर में फैल जाती है और काफी लोग उसपर विश्वास करते हैं, ऐसी आज की स्थिति हैं आज गली–गली में तथा शहरों में सत्यसाईबाबा, बंगालीबाबा, सैलानीबाबा, पार्वती माँ जैसे असंख्य माँ–बाबाओं का महत्व बढ़ रहा है। एडस जैसी जानलेवा बीमारी पर दवा ढूँढने की वैज्ञानिक प्रक्रिया अभी भी जारी है, फिर भी दूसरी तरफ एडस पर कारीगर दवा देने के लिए ढोंगी–बाबाओं के यहाँ एडस रूग्णों की लंबी कतारें लगती हैं। बच्चे नहीं हैं, पुत्र नहीं है आदि कारणों से महिलाओं की यातनाओं के प्रसंग बार–बार घटित हो रहे हैं। गुप्तधन की हवस में आज भी छोटे बच्चों को बलि चढ़ाया जाता है। मन्नत, ब्रत आदि के जरिए महिलाओं का बड़े पैमाने पर मानसिक, शारीरिक शोषण जारी है। कुल स्थिति चिंताजनक है। तिसपर फलज्योतिष जैसा अवैज्ञानिक विषय भी अब कुछ विद्यापीठों में पढ़ाया जाने लगा है। इस पृष्ठभूमि पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण की मूल संकल्पना का आकलन और उसके प्रसार की आवश्यकता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से क्या मतलब है?

बिना सबूत के विज्ञान किसी बात को ग्राह्य नहीं मानता। जानकारी (Information) और ज्ञान (Knowledge) में काफी अंतर है।

किसी घटना में संदर्भ में सहजरूप से, अपने आप जो उपलब्ध होती हैं वह सिर्फ 'जानकारी' रहती है।

ज्ञान (Knowladge) जानकारी से अलग होता है। उपलब्ध जानकारी के आधार पर, समझ के साथ प्रयत्न करके, विशिष्ट सूत्रबद्ध प्रणाली का अवलंब करके, उसके आधार पर अध्ययनपूर्वक प्रयत्नों से प्राप्त निष्कर्षों को 'ज्ञान' कहा जाता है।

30 सितंबर 1993 के दिन महाराष्ट्र में, विशेषतः मराठवाडा के लातूर, उस्मानाबाद जिलों में विनाशकारी भूकंप हुआ। हजारों घर गिर गए। हजारों लोग मर गए। अनेक लोग मलबे के नीचे गाड़े गए। यह सब 'जानकारी' कहलाती है।

ठस जानकारी के आधार पर भूकंप क्यों होते हैं? कैसे होते हैं? उनकी तीब्रता कितनी रहती है तथा उनकी तीब्रता कैसी नापी जाती है? भूकंप में क्यों ज्यादा जीवितहानि होती है? क्या उसे टालना संभव है? क्या भूकंप में सिर्फ मिट्टी के घर गिरते हैं या सिमेंट कंकरीट के भी गिरते हैं? घर निर्मिति की हमारी पारंपारिक पद्धति में क्या कहीं दोष हैं? भूंकप में कम नुकसान होने की दृष्टि से हम कौन–सी उपाय–योजना कर सकते हैं? इन और ऐसे अनेक अंगों से दुनियाभर में हुए भूकंपों को दर्ज करना, बुद्धिपूर्वक प्रयत्नों से उन घटनाओं के समान सूत्रों को खोजने का प्रयत्न करना, उस दृष्टि से सतत चिंतन करना आदि को ही 'ज्ञान' कहा जाता है।

किसी विशिष्ट विषय को चुनकर उस संदर्भ में तर्कशुद्ध अध्ययन से प्राप्त ज्ञान को 'विज्ञान' कहा जाता है। Science (सामन्स) मूलतः ग्रीक शब्द है। उसकी परिभाषा है – knowledge gained by systematic study is called science. संक्षप में 'तर्कशुद्ध अध्ययन से प्रयत्नपूर्वक प्राप्त विशिष्ट विषय का ज्ञान याने विज्ञान।'

जीवशास्त्र, भौतिकी तथा रसायनशास्त्र इन तीन मूलभूत शाखाओं के साथ शरीरशास्त्र, प्राणिशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, मौसमविज्ञान, खेती–विज्ञान, खगोल विज्ञान आदि असंख्य शाखा–उपशाखाओं के द्वारा विश्व की खोज के तथा आज तक गूढ मानी गई घटनाओं के कारणों को जानने के वैज्ञानिक प्रयत्न अथक रूप में जारी हैं। तर्कशुद्ध विचार तथा हेतुपूर्वक अध्ययन करके किसी भी घटना की कारण मीमांसा के आकलन की वृत्ति याने वैज्ञानिक दृष्टिकोण है।

विश्व में तथा अपनी दैनंदिन जिंदगी में घटित किसी भी घटना के पीछे निश्चित कारण होता है। इस कार्यकारण भाव को ढूंढना ही विज्ञान का प्रमुख सूत्र है। बिना कारणों के कोई कार्य संभव नहीं होता, इस विश्वास के साथ उस कारण की दृढ़ता से खोज करने का प्रयत्न विज्ञान अथक मात्रा में करता है।

पेड़ से जमीन पर गिरते फल को देखकर न्यूटन (और सिर्फ न्यूटन!) के मन में प्रश्न निर्माण हुआ कि फल नीचे ही क्यों गिरता है? इस संदर्भ में उसने जो तर्कशुद्ध अध्ययन किया उससे गुरूत्वाकर्षण के सिद्धांत की निर्मिति हुई और दुनिया में भौतिकी की नींव डाली गई।

❖ विज्ञान का उदय

विज्ञान का उदय मूलतः मनुष्य की जिज्ञासा से हुआ है। आसपास की सृष्टि में घटित अनेक घटनाओं के बारे में मनुष्य के मन में कुतूहल था। अनेक घटनाएँ उसे गूढ़ लगती थीं। दिन और रात कैसे बनते हैं? वारिश कैसे होती है? बिजली क्यों चमकती है? बाढ़, तूफान, भूचाल कैसे होते हैं? सागर में ज्वार–भाटा कैसे निर्माण होता है? यहाँ लेकर संक्रामक बीमारियों में हजारों लोग कैसे मर जाते हैं? आदि के संदर्भ में मनुष्य के मन में भयानक आतंक था। अज्ञान था। इस अज्ञान तथा आतंक के परिणामस्वरूप मनुष्य ने सूर्य–चंद्र, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि आदि को पंचमहाभूत मानकर उसने उनकी शरण ले ली। इससे ही देवी देवताओं की संकल्पना उभरी। पंचमहाभूतों की अवकृपा को टालने के लिए पूजाअर्चा, मन्नत, ब्रत, बलि–प्रथा आदि उपचार प्रारंभ हुए।

बहुसंख्य लोग परिस्थिति की शरण में जाते थे। उसी समय दूसरी तरफ कुछ लोग इन घटनाओं का कार्यकारणभाव जानने की कोशिश में थे। हजारों वर्ष यह अध्ययन चल रहा था। अध्ययन के आधार पर प्रचलित पारंपरिक मतों से हटकर कुछ अलग मत को समाज के सम्मुख साहसपूर्वक रखनेवालों को काफी कष्ट उठाने पड़े। उनकी अवहेलना की गई, अत्याचार किए गए। गहन अध्ययन के आधार पर गैलिलिओं ने सिद्ध किया कि सूर्य पृथ्वी की कक्षा में भ्रमण नहीं करता बल्कि पृथ्वी सूर्य की कक्षा में प्रमण करती है। परंतु इस कथन पर उसे सजा फर्माई गई। इस अवकाश में हमारी सूर्यमाला के समान ही असंख्य सूर्यमालाँए स्थित हैं यह मत ज्ञानपूर्वक प्रस्तुत करनेवाले ब्रुनों को पाखंडी समझा गया और उसे जिंदा जलाया गया। सॉक्रेटिस ने कहा कि हर कोई अपनी विवेकबुद्धि के अनुसार हर तत्त्व को, इतना ही नही ंतो ईश्वर के अस्तित्व को भी कसौटी पर कसकर देखें। परंतु उसपर नास्तिकता का आरोप करके उसे विष–प्राशन की सजा दी गई। अपनी विवेकबुद्धि की आवाज तथा आग्रह को कायम रखने के लिए, समाज की अंधश्रद्धाओं

के विरोध में दृढ़ता से खड़े रहने की परंपरा, अपने मतों की रक्षा के लिए मृत्यु को गले लगानेवाले सॉक्रेटिस ने निर्माण की।

विज्ञान की कार्य–प्रणाली :

किसी घटना के संदर्भ में कार्यकारण–भाव खोजते समय विज्ञान विशिष्ट सूत्रबद्ध कार्यपद्धति का अनुसरण करता है।

निरीक्षण, तर्क, अनुमान, प्रतीति तथा प्रयोग के आधार पर जो सिद्ध हो सकता है उसे ही आत्मसात करना विज्ञान की कार्यपद्धति होती है।

किसी के अथक निरीक्षण से ही दुनिया में सारे अनुसंधान हुए हैं। शिकार की खोज में पुरूष हमेशा घर से बाहर भकटते थे। तब घर की महिलाओं ने देखा कि घर से बाहर जमीन पर बीज पड़ता है और बारिस शुरू होने पर वह अंकुरित होता है। अनेक वर्षों के उनके इस निरीक्षण से ही खेती का अन्वेषण किया गया।

घर की चाय की केटली का ढक्कन उसमें स्थित पानी के उबलने से गिर जाता है इस बात को जेम्स वैट ने देखा। वह सोचने लगा–ऐसा क्यों होता होगा? उसने फिर से तीन–चार बा रवह ढक्कन केटली पर रखा, हर बार वह गिरता रहा। जेम्स ने सोचा कि मैं बार–बार इस केटली पर ढक्कन रख रहा हूँ, लेकिन बार–बार गिर रहा है। इसका मतलब यह कि केटली में स्थित कोई न कोई चीज उस ढक्कन को रेल रही है। इसी से बाष्प–शक्ति को उसने ढूँढ़ निकाला। परिणामतः आगे चलकर योरोप में औद्योगिक क्रांति का जन्म हुआ।

परंतु सभी बातें निरीक्षण के द्वारा ही सिद्ध होगी सो बात नहीं। ऐसे समय कुछ तर्कों के साथ विचार करना पड़ता है। अनेक बार हम तर्क करते हैं कि फलानी–फलानी बात करने से फलानी–फलानी बावं संभव होगी। परंतु अगर यह तर्क विज्ञान की कसौटी पर खरा नहीं उतरा तो उसे छोड़ देना पड़ता है।

प्रतीति तीन प्रकार की होती हैं। प्रथम सिर्फ प्रतीति, बाद में बार–बार वहीं प्रतीति और तीसरी है सार्वत्रिक प्रतीति। अगर अनेक लोगों ने हमसे कहा कि अग्नि शीतल होती है तो क्या हम उसे स्वीकारेंगे? अग्नि को हाथ का स्पर्श होने से जलन होती है इसकी प्रतीति हम सभी को कभी न कभी हुई है। यह प्रतीति तत्कालीन होने से काम नहीं चलेगा। बार–बार अनुभव की पुनरावृत्ति आवश्यक है। खाते समय हर बार मीठी महसूस हुई तो ही हम उसे शक्कर कहते हैं। अर्थात

प्रतीति सार्वत्रिक होनी चाहिए। शाही महलों में निवास करनेवाले टाटा–बिर्ला हों या झोंपड़ी में रहनेवाली आदिवासी महिला हो, शक्कर की मीठास सबके लिए एक जैसी होती है। वहाँ उच्चनीच, अमीर–गरीब, शिक्षित–अशिक्षित, नर–नारी जैसा कोई भेद नहीं होता।

प्रयोग विज्ञान का मुख्य तथ्यांश है। किसी भी बात को बारंबार कराके देखाना, उसके आधार पर कुछ निष्कर्ष निकालना, उन निष्कर्षों का फिर से परीक्षण करना और इससे जो सिद्ध होगा उसे स्वीकारना, जो बातें साबित नहीं होतीं उनका सतत अन्वेषण करना इस तरीके से विज्ञान के सत्य–शोधन के प्रयास जारी रहते हैं।

सत्यशोधक की भूमिका से विश्व की तथा अपनी निजी जिंदगी की सभी घटनाओं का कार्यकारण–भाव जानने की दृष्टि से निरंतर दृढ़ता से प्रयत्न करना ही वैज्ञानिक दृष्टि का अवलंब करना है।

❖ आवश्यकता अपनी 'बुद्धि की प्रयुक्ति की!':

सिर्फ किसी व्यक्ति ने कहा है अथवा किसी ग्रंथ में लिखा है इसलिए उसे चुपचाप स्वीकारने की प्रथा को नकारना जरूरी है। हम सबके लिए आवश्यक है कि आँखें मूँदकर किसी बात को न स्वीकारें। तथा विज्ञान की कसौटी पर खरी उतरी बातों को स्वीकारने की मानसिकता का निर्माण करें। 'बाबा वाक्यं प्रमाणम्' को त्यागकर बृद्धिा का इस्तेमाल करके समाज के सभी व्यक्तियों को यह स्वीकारना जरूरी है कि कोई भी निर्णय करने से पहले, जो साबित हुआ है उसी के आधार पर निर्णय लिया जाए अन्यथा उसकी खोज जारी रखी जाए।

'सत्य–असत्य के बारे में साक्षी रखा मन को, नकारा बहुमत को।' –संत तुकाराम के इस जीवन–संदेश को हमें जीवन में उतारना चाहिए। इसी में हर किसी का, परोक्ष रूप में समाज का तथा देश का सर्वाधिक हित है। अधिकाधिक व्यक्तियों के जीवन को अधिकाधिक सुखी बनाने की दृष्टि से विज्ञान निरंतर प्रयत्नशील है।

अन्वेषकता, निर्भयता तथा नम्रता आदि वैज्ञानिक विचारप्रणाली की मुख्य विशेषताएँ हैं। सत्य–शोधन के निरंतर प्रयत्न करना, भले ही समाज का रोष क्यों न सहना पड़े, फिर भी साबित सत्यों को निर्भयता से प्रस्तुत करते रहना आदि काम, वैज्ञानिकों को करने ही पड़ते हैं। विज्ञान और वैज्ञानिक दोनों अत्यंत विनम्र होते हैं। बुवा, महाराज तथा धर्मग्रंथों के अनुसार विज्ञान इस प्रकार दावा नहीं करते कि उन्होंने अंतिम सत्य को ढूँढ़ निकाला है। बल्कि प्रयोगों से निर्मित परिवर्तनों का वे स्वागत करते हैं। तथा इसीसे विज्ञान विकसित होता है।

मानवी जीवन अधिकाधिक सुखी एवं समृद्ध बनाने के लिए विज्ञान सतत प्रयत्नशील है। भूख से किसी मनुष्य की मृत्यु न हो, इसके लिए संकरित बीच खाद, किटकनाशक दवाएँ आदि का अन्वेषण किया गया। विज्ञान मनुष्य की हर समस्या की ओर ध्यान देने का प्रयास करता है। इसके विपरीत मनुष्य की रोजमर्रा की जीवन–पीड़ाओं की परवाह न करते हुए, धर्मवादी लोग गतजन्म का पाप, प्राक्तन, प्रारब्ध आदि बातों की चर्चा करते रहते हैं। बताते रहते हैं कि परिस्थिति की शरण लेना ही एकमात्र पर्याय है। दूसरी तरफ विज्ञान के आधार पर जताया जाता है कि ज्ञान के द्वारा परिस्थिति में परिवर्तन कराया जा सकता है। तभी तो मनुष्य को प्रयत्नवादी बनाते हुए उसकी सर्वाधिक चिंता करनेवाला विज्ञान मानवतावादी कहलाता है।

2. विज्ञान सृष्टि तथा दृष्टि

संगणक, इंटरनेट की इस 21वीं शती में हमारे आसपास की संपूर्ण सृष्टि ही विज्ञान की है। शहरों से लेकर छोटे कस्बों तक घर–घर में घड़ियाँ, आयर्न, रेडियों, टेपरिकार्डर, टी.वी. मिक्सर, फ्रीज, वॉशिंग मशिन आदि अनेक छोटे–मोटे साधनों से लेकर आधुनिक औजार, खाद, बीज, संगणक, इंटरनेट तक विज्ञान का विस्तार हमारे इर्द–गिर्द है। आज अनेक असाध्य बीमारियों के इलाज उपलब्ध हैं। मस्तिष्क, हृदय जैसे जटिल अवयवों की कठिन शल्य–क्रियाएँ आज सुलभ हुई हैं। जैव तंत्रज्ञान के जरिए क्लोनिंग में की गई प्रगति तो आश्चर्यजनक है। हजारों लता मंगेशकर, हजारों सचिन तेंडुलकर, हजारों अमीरखान निर्माण कराने की संभावनाएँ बढ़ी हैं। अर्थात इस तंत्र के दुरूप्रयोग से कुछ गंभीर सामाजिक समस्याएँ उद्‌भूत होने का धोखा है।

विज्ञान की प्रगति की रफ्तार अचंबित कराती है। समाज के बहुसंख्य लोग अपने आसपास की विज्ञान–सृष्टि का संपूर्ण उपभोग लेते हुए दिखाई देते हैं तो दूसरी तरफ अनेक लोगों में विज्ञान दृष्टि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव दिखाई देता है।

गणेशजी के दुग्धप्राशन की अफवाह पर विश्वास करनेवाले ही अधिक पाए जाते हैं। पुत्र की प्राप्ति के लिए पार्वती माँ के यहाँ कतार में खड़ी महिलाओं में शिक्षित महिलाओं की संख्या अधिक पाई जाती है। अब विश्वविद्‌यालय और महाविद्‌यालयों में फलज्योतिष जैसा अवैज्ञानिक विषय पढ़ाया जा रहा है। व्रत, मन्नत, बलि जैसे कर्मकांड जोरों पर हैं। बुवा, महाराज, माँ, शास्त्री, बापू आदि तेजी में हैं। करोंड़ों रूपयों की लागत पर सत्यसाईबाबा के मंदिर उभर रहे हैं। कुल विज्ञान–सृष्टि में डुबकियाँ लगाने पर भी बहुसंख्य लोगों ने अपने कान, आँखें मूँद ली हैं, बुद्‌धि को गिरवी रखा है। इस चिंताजनक परिस्थिति में संदेह होता है कि क्या आदमी ने अपने अविवेक को ही शाश्वत रखने की ठानी है?

वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अभाव के कारण

वैज्ञानिक दृष्टिकोण याने विवेकशीलता। किसी भी बात पर सारासार विचार करने की पद्धति। समाज में विज्ञान दृष्टि का अत्यल्प स्वीकार होने के पीछे कई कारण हैं। इसकी नींव हमारी धर्मवादी परंपरा में भी है।

1. 'चुप रहो – संस्कृतिः

हमारी तथाकथित संस्कृति मूलतः स्थितिवादी, विश्लेषण को नकारनेवाली 'चुप रहो;' की संस्कृति है। इसमें प्रश्न करने की सुविधा ही नहीं है। 'जैसे रखा गया है, वैसे ही रहो और संतोष पा जाओं' इसी प्रकार के संस्कार करनेवाली यह संस्कृति है। साथ ही फलानी–फलानी बात क्यों करनी है? जैसा प्रश्न किसी से पूछा गया तो उसे उद्धत माना जाता था। ऐसी तथाकथित संस्कृति में खुली दृष्टि, जिज्ञासा आदि को गुनाह ठहराया जाता है। स्वर्ग–नरक, पूर्व जन्म का फलित, पुनर्जन्म जैसी बेकार की कथाएँ आज भी सुनाई जाती हैं। समस्या यह है कि थोड़ा–सा भी न सोचते हुए मनुष्य उसके पीछे भाग रहे हैं। समस्या की यही जड़ है।

2. सुलभ उत्तर (शॉर्ट कट) ढूँढने की मानसिकता–

आज भागदौड़ की परिस्थिति में हर मनुष्य को अपने दैनंदिन जीवन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जनसंख्या में काफी वृद्धि हुई है। दूसरी तरफ उपलब्ध साधन–सामग्री सीमित है। दिन–ब–दिन रोजगार के अवसर कम हो रहे हैं। श्रम की प्रतिष्ठा तो कम हुई है ही साथ ही मूल्य भी समाप्त हो रहे हैं। उच्च शिक्षा पाने पर भी नौकरी पाने की बिल्कुल संभावना नहीं रही है। डॉक्टर, एंजीनियर लड़कियों की शादियाँ भी दहेज बिना नहीं हो सकती हैं। सिफारिश, भ्रष्टाचार, बढ़ती गुनहगारी आदि समस्याएँ सभी को तंग कर रही हैं। कुल परिस्थिति आम आदमी को भ्रमित करानेवाली है। ऐसी स्थिति में लोग कुछ अधिक न सोचते हुए तात्कालिक राहत का मार्ग खोजने का प्रयास करते हैं। लोग समस्या की मूलभूत चिकित्सा करना टालते हैं। तात्कालिक आसान मार्ग खोजने की, सुलभ उत्तर खोजने की यह मानसिकता वैज्ञानिक दृष्टिकोण के मार्ग में बाधक बनती है।

3. परंपराओं का गहरा प्रभाव–

सावित्री की कथा पर विश्वास रखनेवाली स्त्रियों की प्रति–निष्ठाा अपनेआप सिद्ध होती है। सावित्री के समान अपनी पत्नी के प्राणों को वापस लाने वाला कोई आधारित अबतक क्यों नही निर्माण हुआ? इस प्रका का स्त्री–पुरूष समता पर आधारित प्रश्न स्त्रियों को गैर लगता है। उनकी सावित्री की कथा में बेहद निष्ठा होती है। शिक्षित महिलाएँ जानती हं कि यह कथा झूठी है लेकिन परंपरा का गहन प्रभाव उन्हें अलग विचार करने नही देता। गमले के 'बोन्साय' बने वटवृक्ष की भी क्यों न हो वे परिक्रमाएँ करती हैं।

4. सदोष शिक्षापद्धति–

रिनक्षरता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अभाव का प्रमुख कारण माना जाता है। आज हमारे देश में आधे से अधिक लोग निरक्षर हैं। अतः उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण जगाने के लिए काफी प्रयत्नों की आवश्यकता है। लेकिन दूसरी तरफ शिक्षितों में अंधश्रद्धाओं की बढ़ती मात्रा को देखकर आश्चर्य होता है। काफी पढ़े–लिखे भी इन अंधश्रद्धाओं का शिकार हो रहे हैं।

विश्वविद्यालय के संगणक–कक्ष का उद्घाटन विधिवज पूजा के साथ, नारियल चढ़ाकर किया जाता है, इससे बड़ा परिहास क्या हो सकता है? बेटा न होने के कारण एंजीनियर पति के द्वारा पत्नी को तकलीफ देना, अस्पताल में ऑपरेशन थिएटर का स्थान वास्तुशास्त्र के आधार पर तय करना आदि के बारे में क्या कहा जा सकता है?

हमारी आज की शिक्षापद्धति ही सदोष है। स्कूल तथा महाविद्यालयों में विज्ञान एक विषय के रूप में पढ़ाया जा रहा है। पाठ्यक्रम में नियोजित प्रयोगों के अलावा छात्रों में जिज्ञासु–वृत्ति का अभाव दिख रहा है। उसे निर्माण करने की दृष्टि से विशेष प्रयास भी नहीं हो रहे हैं। विज्ञान की किसी शाखा का विषय के रूप में अध्ययन और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का स्वीकार ये दो भिन्न बातें हैं। आज की शिखापद्धति छात्रों में विश्लेषण की वृत्ति जगाने में असमर्थ है, यही वास्तव है। अतः विज्ञान में उच्च शिक्षा प्राप्त लोग भी उनके दैनंदिन जीवन में अवैज्ञानिक परंपराओं का जतन करते हुए नजर आते हैं।

5. राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव–

ज्नमानस में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अंकुरित न होने के पीछे अनेकविध कारणों में से प्रमुख कारण है राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव।

3 जनवरी 1977 के दिन भारतीय संविधान में 51 (क) धारा का समावेश किया गया। इसमें नागरिकों के मूलभूत कर्तव्य समाविष्ट किए गए हैं। उसमें से (ज) उपधारा के अनुसार प्रत्येक भारतीय नागरिक को उसकी अनुसंधानात्मक बुद्धि के जरिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा मानवतावाद का अंगीकार आवश्यक माना गया है। इस कर्तव्य का पालन सभी से अपेक्षित है, बंधनकारक भी है। उसके लिए आवश्यक है कि शासन के द्वारा स्वतंत्र कानून बनाया जाए, कर्तव्य–पालन का आग्रह रखा जाए। परन्तु आज ऐसा कुछ नजर नहीं आ रहा है। बल्कि प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति से लेकर मुख्यमंत्री तक अनेक राजनीतिक व्यक्ति सत्यसाईबाबा जैसे अवकाश से अंगूठी निकालकर जादुई करिश्मा दिखानेवाले पोंगाबाबा के दरबार में हाजिरी लगाकर, नतमस्तक होते हुए, उनसे आशीर्वाद पाते हुए दिखाई देते हैं। ये लोग अवैज्ञानिक प्रवृत्तियों का राजनीतिक समर्थन करते हैं और यही शाकांतिका है।

संपूर्ण समाज में व्याप्त अंधश्रद्धाएँ महिलाओं तथा उपेक्षितों के शोषण का साधन बनी हैं। उनको जड़ से उखाड़ने के लिए आवश्यक कानून बनाने में, उनकी परिणामकारक कार्यवाही कराने में आग्रही रहने से शासन कतरा रहा है, हिचकिचा रहा है। आज कुल चित्र इसी प्रकार का है। परंतु अब शासन अधिक देर तक अपनी जिम्मेदारी को न टाले इस दृष्टि से हम सब को प्रयास करने की आवश्यकता है।

6. प्रसार माध्यमों की भूमिका–

आज के बहुसंख्य प्रसार माध्यम सिर्फ बिक्री बढ़ाने का एकमेव उद्दिष्ट सामने रखकर, अवैज्ञानिक विचारों को अधिकाधिक प्रसिद्धि दे रहे हैं यह चिंता की बात है। लोग रूचि में पढ़ते हैं, मन से देखते हैं इसलिए समाचारपत्र, दूरदर्शन केबल नेटवर्क, चित्रपट आदि के द्वारा भूत, भानमती, जादूटोना चमत्कार आदि अवैज्ञानिक बातों को अपरिमित प्रसिद्धि दे रहे हैं। टी.वी केबल पर प्रस्तुत धारावाहिक तो बड़े पैमाने पर अवैज्ञानिक बातों का प्रसार करते हैं। वास्तव में माँग के अनुसार पूर्ति यह बाजार का नियम है। प्रसारमाध्यमों की जिम्मेदारी महत्त्वपूर्ण है। इसे नहीं भुलाया जा सकता

कि जनमानस निर्माण करने की बड़ी ताकत प्रसारमाध्यमों में है। आवश्यक है कि चिकित्सक वृत्ति से समाचारों को आत्मसात कराके प्रसार माध्यमों के जरिए लोगों के सामने सचाई रखी जाए।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव : हानियाँ

समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव होने से काफी नुकसान होता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण की कमी से लोग दैववादी, स्थितिवादी भूमिका को अपनाकर परिस्थिति के वश हो जाते हैं। व्यक्ति के व्यक्तिगत कर्तृत्व तथा प्रगति में अनेक मर्यादाएँ निर्माण होती हैं। अंधश्रद्धाओं की हिफाजत की जाती है। कर्मकांड बढ़ते रहते हैं। इससे शोषण बढ़ता है। इससे महिलाओं को अधिक पीड़ा पहुँचती हैं। उनका शारीरिक, मानसिक तथा आर्थिक शोषण बड़ी मात्रा में होता है। कुछ व्यक्ति तथा समाज की प्रगति में अवरोध निर्माण होता है। देश अविकसित रहता है।

पाखंडी बाबाओं की बुवाबाजी, भूत, भानमती, फल–ज्यातिष, आरोग्य संबंधी विविध अंधश्रद्धाएँ आदि में मनुष्य फँस जाता है। उसका आर्थिक शोषण होता है।

1. **पाखंडी बाबाओं की बुवाबाजी–** मनुष्य पर पूर्वसंस्कारों का काफी प्रभाव रहता है। मनुष्य के मन पर कर्मविपाक सिद्धांत का प्रभाव अंकित किया जाता है। उसके अनुसार हमारे गतजन्म के पापों के फलस्वरूप हमें इस जनम में काफी दुःख उठाने पड़ते हैं। इसी सोच से दैनंदिन जीवन के प्रश्न, दुःख दूर करने के लिए लोग बाबा, बुवा, भगत, माँ, गुरू आदि के पास दौड़ते हैं। कोई बेटा चाहता है, किसी को असाध्य बीमारियाँ रहती हैं, कोई नौकरी चाहता है तो कोई मनःशांति। प्रश्न बड़ी मात्रा में होते हैं। लोग असहाय बनते हैं। तात्कालिक क्यों न हो लेकिन वे आधार चाहते हैं, राहत पाना चाहते हैं। ऐसे असहाय लोग ही इन बुवा बाबाओं की वास्तविक शक्ति होते हैं। फिर ये बुवा लोग व्यक्ति और देवता, व्यक्ति और धर्म के बीच दलाल बनकर रहते हैं, अपनी चालाकी दर्शाने लगते हैं। आज के बुवा तो नए–नए तंत्र तथा वैज्ञानिक भाषा का गलत इस्तेमाल करके सर्वसामान्य लोगों को धोखा देने का काम करते हैं। अगरबत्ती का अपनेआप मंडलाकार घूमना, घट में स्थित टोने–टोटके को पकड़ना, सिंदूर को अबीर में बदलना, हवा में हाथ घुमाकर विविध वस्तुएँ निकालना, भस्म निकालना, वस्तु को स्पर्श करने पर वह वस्तु मीठी आस्वादित होना, हल्दी को सिंदूर बनाना, टोना–टोटना करना, मंत्र से विष उतारना, कीमती पत्थर और रत्नों के आधर पर इच्छित बातों की पूर्ति करना आदि सभी बातें सिर्फ बेवकूफी की हैं, यह अब साबित हो चुका है।

अब लोगों को समझाने की जरूरत है कि विज्ञान का आधार लेकर हस्तलाघव के साथ झूठ बोलकर बुवा लोग लोगों को लूटते रहते हैं।

अगर प्रश्नों का सुलझा जाना संभव नहीं है तो फिर सिर्फ तात्कालिक मानसिक आधार किस काम का? बल्कि प्रश्नों की जड़ पकड़कर धैर्य, आत्मविश्वास तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ उनका सामना करने में ही सच्चा सामर्थ्य छिपा रहता है। अगर हर व्यक्ति इसी निर्धार से आगे बढ़े तो ऐसे तथाकथित बाबाओं की छुट्टी कराने में देर नहीं लगेगी।

2. भूत/इंद्रजाल–

संसार में भूत–विद्यमान नहीं है। परंतु हम बच्चों को उनके बचपन से ही भूत–प्रेत की कहानियाँ सुनाते हैं। इनमें से बहुत–सी बातें सुनी–सुनाई जानकारी के आधार पर एक–दूसरे को बताई जाती हैं। इनकी सच्चाई की जाँच–पड़ताल नहीं की जाती। बचपन में अंतर्मन में स्थित यह जानकारी जैसी की तैसी बनी रहती है। आगे चलकर किसी समय मनुष्य के बहिर्मन को संवेदनाओं के आभास होने लगते हैं। अंतर्मन की जानकारी के आधार पर लोग भूत की आकृति, उसका रंग उसके उल्टे पैर आदि के बारे में तर्क करने लगते हैं। वस्तुतः ये सारे मन के खेल रहते हैं, 'भास रहते हैं। अनेक बार संबंधित व्यक्ति मनोविकारों से पीड़ित रहता है। 'भूत दिखाओं, पुरस्कार पाओं' जैसा अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के द्वारा प्रस्तुत यह चुनौती आज तक किसी ने भी स्वीकार नहीं की हैं।

शरीर तथा कपड़ों पर भिलावाँ की फुलियाँ अंकित होना, घर की चीजें अपने स्थान पर अपने–आप हिलने लगना, कपड़ों में अपने आप आग लगना, वस्तुओं का गायब होना, आँखों से काँच, पत्थर के टुकड़े, सुईयाँ निकलना आदि घटनाओं के अस्तित्व के पीछे इंद्रजाल तथा भानमती होती है ऐसा माना जाता है। अगर सचमुच हमारा इंद्रजाल इतना 'पॉवरफुल' होता तो हमें अपनी देश की सुरक्षा पर काफी पैसा खर्च नहीं करना पड़ता। सीमा पर लष्कर के बजाय भानमती कराने वालों की टीम ही काफी हो जाती। शत्रुराष्ट्र पर अनायास पत्थर या बम की वर्षा कराई जाती, आसानी से आग लगाई जाती। परंतु यह संभव नहीं है क्योंकि मूलतः भानमती जैसी चीज अस्तित्व में ही नहीं है।

कोई घटना बे–वजह घटित नहीं होती। इंद्रजाल से जो घटनाएँ निर्माण की जाती हैं उनके पीछे किसी–न–किसी व्यक्ति को करतूत करती है। उसे खोज निकालने पर इंद्रजाल का पर्दा खुल जाता हैं। ऐसा देखा गया है कि ऐंद्रजालिक घटनाओं के पीछे कुछ विफलता से ग्रसे हुए,

तिरस्कृत, असफल लोग ही रहते हैं। लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कराने के लिए, सहानुभूति पाने के लिए, संत्रास को कम कराने के लिए मानसिक दृष्टि से इताश लोग इंद्रजाल का आधार ग्रहण करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसे व्यक्तियों को ढूँढकर, उन्हें सहानुभूति दिखाकर मानसिक आधार दिलाने से भानमती के ये प्रकार रूक जाते हैं। आवश्यकता होने पर मानसोपचार तज्ञों की मदद ली जा सकती है।

3. फलज्योतिष

आकाशस्थ ग्रह, तारों के मनुष्य जीवन पर होने वाले परिणामों का भविष्य फलज्यातिष के द्वारा बताया जाता है। लोग समझते हैं कि आकाश के सूर्य–चंद्र तथा शनि, राहू, केतु, धूमकेतु आदि का मनुष्य के जीवन पर असर होता है और उसी से जीवन में अच्छी–बुरी घटनाएँ घटित होती हैं।

गत हजारों सालों से खगोल–विज्ञान इस महाकाय विश्व का अंतरंग जानने की कोशिश में है। विश्व विस्तृत है। उसमें 1000 करोड़ से अधिक आकाश–गंगाएँ हैं। हमारी आकाश–गंगा में 20 हजार करोड़ सूर्य हैं। हमारा सूर्य कोई बड़ा नहीं है बल्कि वह एक मध्यम स्तर का तारा है। विश्व के ग्रह–तारें पृथ्वी से काफी दूर हैं। वे इतनी दूरी पर हैं कि उनका अंतर किलोमीटरों में नापना अत्यंत कठिन है। इसी कारण इस अंतर को किलोमीटरों के बजाय 'प्रकाशवर्षों' में गिनाया जाता है।

प्रकाश की गति प्रति सेकंड 2 लाख 99 हजार 792 किलोमीटरों की रहती है। इस गति से प्रकाश एक साल में 9461 अब्ज (अर्थात 9461 की संख्या पर नौ शून्य) किलोमीटरों की यात्रा तय करता है। इस महाकाय अंतर को 'एक प्रकाशवर्ष' कहा जाता है। पृथ्वी के नजदीक का मित्र (अल्फा सेंटारी) तारा 4.3 प्रकाशवर्ष की दूरी पर है। इससे कल्पना की जा सकती है कि अन्य ग्रह तथा तारे पृथ्वी से कितने अंतर पर हैं। तथा इतनी दूरी से ये गह और तारें मनुष्य के दैनंदिन जीवन पर प्रभाव डालते हैं। इसमें कहाँ तक तथ्य है यह भी सोचने की बात है।

मनुष्य के जन्म–समय के आधार पर उसकी कुंडली बनाकर पत्रिका तैयार करके उसके आधार पर दैनंदिन जीवन की घटनाओं के बारे में अंदाज व्यक्त करने का काम ज्यातिष लोग करते हैं। आज ऐसे अनेक लोग पाए जाते हैं जो हथेली की रेखाओं को, चेहरे को, शरीर के तिलों को, शरीर के कद को तथा लिखावट को देखकर भविष्य बताने का दावा करते हैं। परिस्थित से त्रस्त लोग तात्कालिक मानसिक आधार पाने के लिए ज्योतिषों का आधार ग्रहण करते हैं।

ज्यातिष को शास्त्र मानने की दृष्टि से कोई ठोस आधार नहीं है। सबूत नहीं है। किसी बड़ें उद्योगपति की हथेली को रेखाएँ और वर्षानुवर्ष शारीरिक मेहनत करनेवाले श्रमकर की हथेली की रेखाएँ इनमें समानता पाने पर भी उन दोनों के जीवन में इतनी अन्यायमूलक विषमता क्यों होती है इसका उत्तर ज्योतिषों के पास नहीं होता। हजारों मील दूरी पर स्थित ग्रह तारे मानवी जीवन का नियंत्रण कर सकते हैं यह कल्पना भी हास्यास्पद है। जन्म–वेला भी कैसे पक्की की जाए? सीजर ऑपरेशन कराके जनमें बालाकों की जन्म–वेला कौन–सी होगी? गर्भ–निर्मिति का समय जन्म–समय माना जाए या नौ महिनों के बाद जब बच्चा गर्भ से बाहर निकलता है उसे जन्म–समय समझा जाए? जन्म के समय जिसके पैर पहले बाहर आए हों ऐसे बच्चे का जनम–समय कौन–सा माना जाए? क्या निश्चित जन्म–समय सचमुच बताया जा सकता है? ऐसे एक–दो नही बल्कि असंख्य प्रश्न हैं जिनके उत्तर फलज्योतिष बताने वालों के पास नहीं है। इसलिए अशास्त्रीय, निरूपयोगी फलज्योतिष की बैसाखियों के सहारे चलने में मनुष्य का हित नहीं है। आज यह सब समझाने की आवश्यकता है।

4. आरोग्य विषयक अंधश्रद्धाएँ–

समय में विविध प्रकार की अंधश्रद्धाओं का पोषण किया जाता है। उसमें आरोग्य से संबंधित अंधश्रद्धाएँ भी रहती हैं। महिलाओं में इसकी अधिक मात्रा पाई जाती है।

रजोधर्म, गर्भधारणा, प्रसूति, गर्भधारणा के दिनों में आहार, बच्चे के तालु में तेल डालना, आँखों में काजल लगाना, गर्दन हिलाना, दाँतों के कारण दस्त–वमन होना, टीका लगाना, बच्चे का आहार आदि सैकड़ों बातों में महिलाएँ अंधश्रद्धाओं का पालन करती हैं।

पीलिया, अस्थमा, कुत्ते के द्वारा काटा जाना, बिच्छू डँसना, सर्पदंश, तपेदिक (राजयक्ष्मा), कुष्ठरोग, त्वचारोग, परिवार–नियोजन, रक्तदान आदि के बारे में भी अंधश्रद्धाओं का पालन किया जाता है।

अ. महिला और अंधश्रद्धाएँ– अपनी शरीररचना के संदर्भ में अनभिज्ञता ही महिलाओं में बढ़ती अंधश्रद्धा का मूल कारण है। शास्त्र के अनुसार प्रत्येक स्त्री उसके उम्र के 13 वें वर्ष से लेकर 45 वें वर्ष तक मासिक–धर्म से गुजरती है। यह प्राकृतिक धर्म है। उसके स्वास्थ्य के अनुसार इसमें थोड़ा–बहुत परिवर्तन हो सकता है। मासिक–धर्म उसके शरीर का धर्म है। इसलिए उसमें कोई अपवित्रता, अपराध मानने की आवश्यकता नहीं है। उम्र के 18 वें वर्ष तक स्त्री की शरीरिक, मानसिक वृद्धि, गर्भधारणा, प्रसूति, बाल–संगोपन के लिए अनुकूल तथा सक्षम नहीं होती। इसलिए

उससे पहले उसका विवाह करना गलत है। यह लड़की के प्राणों से खेलने जैसा है। उम्र के 18 वर्ष पूर्ण होने के बाद लड़की की शादी करना उसके और उसके भावी बच्चे के हित में होता है।

लड़का व लड़की को जन्म देना किसी के वश नहीं रहता। न उसमें किसी का दोष होता है। स्त्री और पुरूष की प्रत्येक कोशिका में बाईस तथा लिंग निश्चित करनेवाली एक इस प्रकार तेईस गुणसूत्रों के जोड़ रहते हैं। दोनों के बाईस जोडों में xx गुणसूत्र रहते हैं। स्त्री में xx तथा पुरूष में xy का जोड़ लिंग–निश्चिति करता है। अर्थात स्त्री–बीज की कोशिकाओं में गुणसूत्र के सभी याने 23 जोड़ों में xx रहते हैं पुरूष–बीज में स्थित तेईसवाँ जोड़ xy के रूप में हुआ तो लड़का जन्म लेता है। बात इतनी आसान है। मतलब लड़का या लड़की पैदा होने में किसी को दोषी या जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। लेकिन लड़की पैदा होने में स्त्री का ही दोष है ऐसा मानकर उसे पीड़ित करना गैर, निषेधार्ह, अन्यायकारक है।

बच्चा न होनेपर भी किसी को दोषी मानना गलत है। बाँझपन के अनेक कारण हो सकते हैं। कभी–कभी गर्भोत्पत्ति की दृष्टि से स्त्री–पुरूषों के जननेंद्रियों की रचना निरूपयोगी हो सकती है। कमजोरी, अपूर्ण आहार, विशिष्ट क्षारों की कमी, कुछ विशिष्ट बीमारियाँ, पुरूष–वीर्य में शुक्राणुओं की कमी, मधुमेह आदि विविध कारणों से वंध्यत्व हो सकता है। उसे ढँढकर उस उस पर उपचार किए जा सकते हैं। तज्ञ डॉक्टरों से सलाह–मशवरा किया जा सकता है। फिर भी बच्चा नहीं हुआ तो वह किसी का अपराध नहीं हो सकता। बच्चा न होने से निराश होने के बजाय अगर किसी अनाथ बच्चे को गोद लिया जाए तो उसका अपने बच्चे ससमान लालन–पालन किया जा सकता है। अपने साथ उसके भी जीवन में आनंद का निर्माण किया जा सकता है।

- **ग्रहणों का गर्भ पर परिणाम–**

हमारे यहाँ हजारों वर्षों से इस अंधश्रद्धा का पोषण हुआ है कि ग्रहण का गर्भ पर अनुचित परिणाम होता है। ग्रहण–काल में सब्जी काटना, कपड़े धोना, पैर पर पैर रखकर बैठना आदि बातें मना हैं क्योंकि उससे होनेवाले बच्चे में विकलांगता आती है। ये सारी भ्रांत धारणाएँ हैं। अब स्कूल–जाते बच्चे भी जानते हैं कि ग्रहण सूर्य, पृथ्वी तथा चंद्र के स्थित्यंतरों से निर्मित धूप–छाँव का खेल मात्र है। ग्रहण का गर्भ पर कोई विपरीत परिणाम नहीं होता।

- **आहार–**

केले, पतीता आदि फल गर्मी निर्माण करते हैं, उनके खाने पर गर्भपात होता है ऐसा मानना भी अंधश्रद्धा ही है। वस्तुतः केला, पपीता जैसे फल सस्ते तथा पोषक हैं। उनका सेवन जरूरी है।

- **तालु में तेल भरना–**

बच्चे के तालु में अधिकाधिक तेल, मक्खन, मलाई डालकर उसके तालु को ठीक करने का तरीका सवत्र पाया जाता है। इस पद्धति से तालु में तेल डालना गलत होता है, अनावश्यक होता है। तालु याने खोपड़ी की अस्थियों में स्थित प्राकृतिक दरार। तालु की इस विशिष्ट रचना के कारण ही प्रसूति के समय बच्चे का सिर सुलभता के साथ प्रसूतिमार्ग से बाहर निकल सकता है बच्चे के मस्तिष्क की वृद्धि की दृष्टि से भी कुछ स्थान आवश्यक होता है। तालु में स्थित अस्थियाँ 18 वें महीने तक अपने आप जुड़ जाती हैं। इसलिए अलग रूप से तालु में तेल डालने की आवश्यकता नहीं होती।

- **काजल डालना–**

ऐसा माना जाता है कि काजल से आँखें चमकदार, बड़ी स्वस्थ रहती हैं। वस्तुतः हर अवयव की सुदृढ़ता की, स्वस्थता की दृष्टि से शरीर में ही कुछ योजनाएँ रहती हैं। आँखों में आर्द्रता बनी रहने के लिए तथा कूड़ा–कचरा, जंतुओं से उसकी रक्षा होने के लिए आँसुओं की योजना हुई है।

बहुधा गंदी उँगली से काजल डाला जाता है। उसकी गुणवत्ता भी संदेहास्पद रहती है। अतः आँख जैसे नाजुक अवयव में जंतुसंसर्ग की संभावना बढ़ती है। इसलिए यही बेहतर है कि आँखों में काजल न डाला जाए।

- **तेल डालना–**

कान, नाक, नाभि आदि आवश्यक स्थानों पर स्निग्धता बनी रहने की दृष्टि से शरीर में तैलग्रंथियों की योजना होती है। इसलिए ऊपर से तेल डालने की आवश्यकता नहीं होती। अनेक बार तेल से सूक्ष्मजंतु तथा फफूँदी का प्रादुर्भाव हो सकता है। साथ ही अगर नाक में बार–बार तेल डाला जाए तो वह फेफड़ों में पहुँचकर न्यूमोनिया की संभावना बढ़ती है। अतः यही ठीक है कि तेल न डाला जाय।

- **दाँतों के कारण दस्त या वमन होना–**

अनेक महिलाएँ समझती हैं कि बच्चों को अगर दस्त या वमन होने लगा तो वह उगनेवाले दाँतों के कारण हो रहा है। परंतु उगनेवाले दाँतों से यह संभव नहीं होता। उसके अन्य अनेक कारण हो सकते हैं। अशुद्ध पानी और जंतुसंसर्ग से भी दस्त या वमन होता है। दस्त के कारण शरीर में पानी की मात्रा कम होने लगती है और बच्चा सूखने लगता है (Dehydration)। यह स्थिति

धोखादायक हो सकती है। इसलिए अगर बच्चे को दस्त होने लगे या वमन होने लगा तो वह दाँतों की वजह से है ऐसा मानना गलत है। ऐसे समय उसे दवाखाने ले जाना आवश्यक है।

- **टीका लगाने के संदर्भ में भ्रांत धारणाएँ–**

कुकुरखाँसी, गले की बीमारी, धनर्वात, खसरा, चेचक, पोलियो तथा राजयक्ष्मा जैसे महाभयानक रोगों से बच्चों को बचाने के लिए उन्हें विशिष्ट कालावधि में ही रोगप्रतिबंधक टीका लगाना आवश्यक होता है। परंतु सुई लगाने पर बुखार आता है, हाथों में सूजन आती है, दर्द होता है आदि के डर से बच्चों को टीका लगाने में देर की जाती है। वस्तुतः हम इससे बच्चे के प्राण धोखे में डालते हैं। समय पर पास के दवाखाने में ले जाकर टीका लगवाना और बच्चे को निरामय दीर्घायुष्य प्रदान करना इसी में समझदारी है।

- **बच्चे का आहार–**

बच्चों के आहार के बारे में काफी भ्रांत धारणाएँ मिलती हैं। बच्चे के लिए माँ का दूध ही अधिक शुद्ध, उत्तम तथा अमूल्य होता है। अन्य कोई दूध, दूध–पाउडर न खिलाना ही बेहतर है। मुमकिन हो तो उसे बोलत से दूध न पिलाया जाए। लाख कोशिशाों के बावजूद भी बोतल तथा नीपल को निर्जंतुक रखना मुश्किल होता है। इससे दस्त, वमन जैसे जंतुदोष निर्माण होते हैं। बचचे को सिर्फ पतला चावल खिलाना काफी नहीं होता। जो बच्चे सिर्फ चावल पर निर्भर होते हैं वे कमजोर रहने की संभावना होती है। चावल के साथ दाल, हरी सब्जियाँ, फल, अंडे, मछलियाँ जैसा प्रथिन, जीवनसत्व, लोह तथा खनिजों से युक्त आहार बच्चों के लिए जरूरी होता है।

ब. बीमारियों के सारे में भ्रांत धारणाएँ–

- **पीलिया–**

पीलिया के बारे में अनेक गलतफहमियाँ पाई जाती हैं। पीलिया से पीड़ित आदमी विशिष्ट बुवा की दी हुई दवा लगाने के बाद पानी में हाथ धोने पर पानी पीले रंग का हो जाता है, मतलब पीलिया पानी में उतर आता है। विशिष्ट वनस्पति के तिनके पर ओझा से मंत्र डलवाकर अगर उसकी माला गले में रखी जाए तो पीलिया नष्ट हो जाता है। ये और ऐसी काफी गलत धारणाएँ पाई जाती हैं। पीलिया के रूग्ण शुरू में मांत्रिक, माला आदि पर अवलंबित रहते हैं और जब बीमारी बढ़ती है तब दवाखाने की तरफ भागते हैं। परंतु इससे जोखिम बढ़ता है।

पीलिया विषाणुओं के संसर्ग से होता है। आज तक उसपर असरदार दवा उपलब्ध नहीं है। फिर भी उचित आहार, पर्याप्त आराम और डॉक्अर के द्वारा नियमित जाँच करवाने से पीलिया धोखादायक

नहीं रहता, बल्कि निश्चित कालावधि में ठीक हो जाता है। व्यक्तिगत और सार्वजनीन सफाई की तरफ ध्यान देने से पीलिया जैसे अनेक विषाणुज्न्य बीमारियाँ टाली जा सकती हैं। मांत्रिक, तिनकों की माला ये कोई इलाज नहीं हैं।

- **दमा–**

कोजगिरी पैर्णिमा के दिन दवायुक्त दूध पीना, मछली निगलना, बीड़ी तथा शराब का सेवन आदि उपायों से दमा ठीक हो जाता है ऐसा मानना गलत है। ये अंधश्रद्धाएँ हैं।

दमा श्वास–विकृति होती है। दमा से पीड़ित व्यक्ति को साँस लेने में दिक्कत होती है। शरीरांतर्गत होनेवाली कुछ त्रुटियाँ, धूल, दवाएँ, खाने की चीजें आदि बाह्य घटकों की एलर्जी से दमा होता है। डॉक्टरों से सलाह लेकर दवा लेना ही इसका सर्वोत्तम इलाज हो सकता है। दवायुक्त दूध, मछली, बीड़ी, शराब आदि से दमा ठीक नहीं होता। बल्कि उसके अन्य दुष्परिणाम रहते हैं। ?

- **कुत्ते का काटना–**

पागल कुत्ते के काटने से रेबीज की बीमारी होती है। कोई भी पागल प्राणी, जैसे कि बिल्ली, सुकर, गाय, सियार आदि के काटने से रेबीज की बीमारी होती है। कुत्ते के काटने पर पोंगाबाबा रूग्ण को खाने के लिए मंत्रित रोटी देते हैं। रेबीज प्रतिबंधक टीका न लगाया जाए और कुत्ते के काटने पर तुरंत डॉक्टर की सलाह लेकर इंजेक्शन्स न ली जाएँ तो रूग्ण के मर जाने की संभावना रहती है। मंत्रित रोटी किसी काम की नहीं होती। कुत्ते के काटने पर तेल, घी न खाया जाए, यह भी एक अंधश्रद्धा है। रेबीज और तेल, घी का कोई पारस्परिक संबंध नहीं है।

- **बिच्छू का डँसना–**

बिच्छू के डँसने पर वहाँ भयानक वेदनाएँ होने लगती हैं। व्यक्ति की सहनशीलता पर उसकी पीड़ा अवलंबित रहती है। बिच्छू के डँसने पर उस व्यक्ति को दवाखाने में ले जाना ही ठीक रहता है। मंत्र के जरिए बिच्छू के विष को उतारना अथवा चढ़ाना संभव नहीं होता। प्रदूषित हवा–पानी, त्वचा के संपर्क में आनेवाले विविध रसायन, सौंदर्य प्रसाधनों का अतिरिक्त प्रयोग आदि के कारण होते हैं। उचित उपचारों से वे ठीक भी हो सकते हैं।

- **परिवार–नियोजन–**

'जनसंख्या का विस्फोट' आज की सबसे गंभीर समस्या है। सीमित परिवार समय की माँग है। ऐसे समय परिवार नियोजन से संबद्ध सभी भ्रांत धारणाओं को दूर करके, उपलब्ध साधनों के उपयोग

से, पुरूष तथा स्त्रियों की नसबंदी की शल्यक्रिया से 'सीमित परिवार, सुखी परिवार' यह नए युग का नया मूलमंत्र व्यवहार में लाने की आवश्यकता है।

रक्तदान–

रक्त के चार गुट होते हैं– ए,बी, एबी तथा ओ। सुदृढ़ व्यक्ति के शरीर में उसके वनज के 1/12 की मात्रा में रक्त होता है। अर्थात 60 किलों वनज के व्यक्ति के शरीर में साधारणतया पाँच लीटर रक्त होता है। रक्त लेते समय अधिक से अधिक 350 मिलीलीटर ही लिया जाता है। अतः रक्तदान से कमजोरी बढ़ती है यह गलत बात है। रक्तदान के बाद शरीर तुरंत इस रक्त हानि को पूरा करता है। इसलिए जरूरत के समय रक्तदान करना ही चाहिए। निरोगी व्यक्ति सालभर में तीन बार रक्तदान कर सकता है। तथा अनेकों के प्राण बचा सकता है। रक्त देते समय सावधानी बरतनी पड़ती है, यथा सुई निर्जंतुक हो, एक बार प्रयुक्त होने पर उसे फेंक दिया जाए इ.।

आरोग्यविषयक तथा अन्य सभी अंधश्रद्धाओं को समाप्त करके विवेकनिष्ठ दृष्टिकोण अपनाने में ही समाज का हित है, इस बात की तरफ लोगों का ध्यान आकर्षित करना चाहिए। बीमारी व्यक्तिगत हो या संक्रामक, वह क्यों होती है, उसपर कौन–से इलाज हैं, बीमार न होने के लिए प्रतिबंधक उपाय कौन–से हैं आदि के बारे में सजगता जरूरी है।

किसी भी बात की तरफ सजगता से देखना ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अवलंब करना है।

3. वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने से लाभ

वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनानेवाला व्यक्ति उसके निजी जिंदगी की तथा सामूहिक जीवन की हर घटना की तरफ विश्लेषक दृष्टि से देख सकता है। किसी भी घटना के बाद उसके कारणों को खोजने का प्रया सवह करने लगता है। विद्यार्थी महसूस करने लगते हैं कि व्रत न रखने से वह फेल नहीं हुआ है बल्कि नियमित अध्ययन न करने से फेल हुआ है। फिर वह अपनी गलतियों को सुधारने की भरसक कोशिश करता है।

अधिकांश रोग, बीमारियाँ गंदे पानी के कारण होती हैं इसका आकलन हो जाता है और लोग पीने के लिए शुद्ध पानी का आग्रह रखते हैं। पानी दूषित न करने की सावधानी बरतते हैं।

सर्पदंश से पीड़ित व्यक्ति को उसके रिश्तेदार मांत्रिक के पास ले जाकर उसके प्राणों को धोखे में डालने के बजाय डॉक्टर के पास ले जाते हैं।

जब ध्यान में आता है कि बच्चा न होने में स्त्री का कोई दोष नहीं होता तब बच्चे की प्राप्ति के लिए महिलाओं को जो तकलीफें दी जाती हैं, उनकी मात्रा कम हो जाती है। घर–घर में महिलाओं की शरीरिक, मानसिक पीड़ा समाप्त हो जाती है।

मानवी जीवन और आसपास की सृष्टि का दृढ संबंध समझने पर लोग अपने आप पर्यावरण की चिंता करने लगते हैं।

वैज्ञानिक दृष्टि के अपनाने से व्यक्ति दैववादी, स्थितिवादी प्रवृत्ति का त्याग करके प्रयत्नवादी बनता है। उसका आत्मविश्वास बढ़ता है। वैज्ञानिक वृत्ति उसे समस्या की जड़ तक पहुँचने में मदद करती है। अतः तात्कालिक, ऊपरी–ऊपरी विचार करने की प्रवृत्ति नष्ट हो जाती है। तकसंगत विचार की आदत से व्यक्ति इहवादी बनता है। वह जानने लगता है कि उसकी यात्रा जन्म से मृत्यु तक ही सीमित है। अतः इस जीवनयात्रा में उसका अपना तथा अन्यों का सहजीवन कैसे अधिक सुखदायक, सुंदर हो सकता है इसके बारे में वह सोचने लगता है, बर्ताव करने लगता है। व्यक्ति महसूस करता है कि हमारे ही हाथों में अपने जीवन का विकास निहित है अतः उसके लिए हमें चरम प्रयत्न करने चाहिए।

जब समाज में प्रयत्नवादी व्यक्तियों की संख्या बढ़ने लगती है तब अपने आप समूह तथा देश की प्रगति होती रहती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण हर व्यक्ति में सारासार विवके, चिकित्सक वृत्ति तथा नम्रता को अंकित करता है। विश्वास होने लगता है कि सभी प्रश्नों के उत्तर बृद्धिवाद से पाए जा सकते हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने पर व्यक्ति किसी भी प्रकार की अंधश्रद्धा को स्थान नहीं देता। वह जानता है कि भूत, भानमती, चमत्कार, तावीज, ताईत, माँ, बुवा आदि सब पाखंड है।

उसे विश्वास होता है कि उसके ही हाथों में उसका भविष्य है। अंधश्रद्धाओं से निर्मित शारीरिक, मानसिक तथा आर्थिक शोषण रूक जाता है।

वैज्ञानिक दृष्टि का अंकन कैसे किया जाए?

समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अंकन कराने की सामूहिक जिम्मेदारी समाज के सभी घटकों की है और संघटित होकर ही उसे निभाने की जरूरत है। उसमें अभिभावक, स्कूल–महाविद्यालय–विश्वविद्यालय जैसी शिक्षा–संस्थाएँ, शासन, लोकप्रतिनिधि, न्यायसंस्था, प्रसारमाध्यम, शिक्षक–लेखक–पत्रकार–कलाकार तथा अन्य सामाजिक संस्था–संघटनों की जिम्मेदारी अधिक है।

अभिभावकों के कर्त्तव्य –

आसपास का वातावरण काफी बदला हुआ है। आज की बाल–पीढ़ी अधिक जिज्ञासु बनी है। उनके मन में हमेशा विविध प्रश्न उभरते हैं। बच्चों की निरीक्षण शक्ति भी तेज है। बारिश से बचने के लिए सूर्य छाता कहाँ से पाता है? इस प्रश्न से लेकर हमारा बड़े चाव से ईश्वर को चढ़ाया भोग वे क्यों नहीं खाते? यहाँ तक के अनेक प्रश्न उन्हें बेचैन करते हैं।

लेकिन जब बच्चे प्रश्न पर प्रश्न करने लगते हैं तब अभिभावक अपने बड़प्पन का आभाव (वस्तुतः दादागिरी कराके) निर्माण करते हैं, कुछ जैसे– तैसे उत्तर देकर उन्हें चुप कराने का, अर्थात उनकी चिकित्सक वृत्ति को मारने का प्रयास करते हुए नजर आते हैं। निश्चित ही यह अनुचित है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण बढ़ाने के लिए आवश्यक है कि अभिभावक अपनी परंपरागत 'चुप रहो' संस्कृति का त्याग करें। बच्चों के मन में उठे प्रश्न उन्हें पूछने दें। उन प्रश्नों के उत्तर खोजने में बच्चों की सभी प्रकार से मदद करें। अगर कुछ प्रश्न संकट में डालनेवाले हों तो भी उनके उत्तरों को न टाला जाए। अगर किसी बात की जानकारी नहीं है तो उसे बच्चों के सामने ईमानदारी से प्रकट करने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए। लेकिन कभी भी झूठ न बोला जाए। ऐसा अनुभव है कि सूज्ञ अभिभावक अच्छी रीति से बच्चों की चिकित्सक वृत्ति का पोषण करते हैं।

इसके साथ ही विविध पर्यायों को अपनाते हुए बच्चों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अंकित किया जा सकता है। यथा–बच्चों को बढ़ने के लिए वैज्ञानिकों की जीवनियाँ देना, खोज कैसे की गई, गलतियों के साथ ही शास्त्रज्ञ आगे कैसे बढ़े आदि की जानकारी देना, घर में प्रयुक्त विविध साधनों की निर्मिति तथा कार्यपद्धति की प्रक्रिया सिखाना, बच्चों को विज्ञान–अनुसंधान का प्रदीर्घ, कष्टपूर्ण इतिहास बताना, बच्चों में स्थित सृजन–शक्ति को बढ़ावा देने के लिए वैज्ञानिक खिलौने देना आदि।

जरूरी है कि अभिभावक बच्चों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की निर्मिति को प्रमुखता दें।

शिक्षा संस्थाओं की जिम्मेदारी–

स्कूल, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालयों की सावधानी बरतनी चाहिए कि कहीं वे अपने पाठयक्रमों में अवैज्ञानिक विचारों को बढ़ावा न दें। विज्ञान को एक विषय के रूप में बढ़ाते समय प्रयोगशाला के प्रयोगों के साथ ही छात्रों को उस प्रयोग की पृष्ठभूमि, निष्कर्षों का व्यावहारिक उपयोग आदि की जानकारी देना जरूरी है। विज्ञान–दिन, विज्ञान मेला, विज्ञान–प्रदर्शन, प्रश्नमजूषा, वैज्ञानिकों के जन्मदिन और स्मृतिदिन, विज्ञान विषयक व्याख्यानमाला, स्लाईडशो, वैज्ञानिक सजगता, जागृति, पाठ्यक्रम की निर्मिति, प्रशिक्षण, परीक्षा, अंधश्रद्धा निर्मूलन मंच जैसे विविध उपक्रमों के जरिए शिक्षा–संस्थाएँ छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टि विकसित करने का काम कर सकती हैं।

सरकार से उम्मीद–

स्माज में वैज्ञानिक दृष्टिकोा बढ़ाने के लिए सरकार से उम्मीद रखी जाती है कि वह अंधश्रद्धा निर्मूलन संबंधी आवश्यक कानून करें, उनकी कठोर कार्यवाही करने का आग्रह रखें। सरकार को सावधानी बरतनी होगी कि प्रशासन के किसी भी व्यक्ति के द्वारा, लोकप्रतिनिधि के द्वारा किसी अवैज्ञानिक विचार का उदात्तीकरण न किया जाए।

'मन्नत माँगने से बच्चा होता हो, तो फिर पति की क्या जरूरत है? इस प्रकार का खड़ा सवाल करनेवाले संत तुकारामजी से लेकर, विज्ञान तथा बुद्धिवाद के सहारे सामाजिक अंधश्रद्धाओं पर कठोर प्रहार करनेवाले संत गाडगेबाबा, महात्मा फुले, डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, प्रबोधनकार ठाकरे आदि महानुभावों तक सत्यशोधक विचारों की एक लंबी परंपरा महाराष्ट्र में है। उसे आगे बढ़ाने का काम सरकार के द्वारा किया जाना जरूरी है।

न्यायसंस्था उपलब्ध कानूनों के आधार पर अवैज्ञानिक प्रवृत्तियों का प्रतिबंध कराने का काम कर सकती है।

लेगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करने तथा उनका प्रयत्नवाद पर विश्वास बढ़ाने के लिए निरंतर प्रबोधन की आवश्यकता होती है। प्रसारमाध्यम, शिक्षक, लेखक, पत्रकार, कलाकार, सामाजिक संस्था–संघटन, कार्यकर्ता आदि सब को अपने व्यक्तिगत आचरण से तथा प्रबोधन–अभियानों से इस चुनौती को अपनाना चाहिए।

अध्ययन मंडल, व्याख्यानमाला, परिसंवाद, विज्ञानविषयक प्रश्नमंजूषा, स्पर्धाएँ, विज्ञानमेला, कलापथक, नुक्कड नाटक, विज्ञान–प्रदर्शन, स्लाईड–शो, विज्ञान–जागर तााि अंधश्रद्धा निर्मूलन आंदोलन में सहयोग आदि विविध मार्गों को अपनाकर प्रत्येक सेवादल सैनिक को वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करना चाहिए।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास : विद्यमान प्रयत्न –

समाज में स्थित अंधश्रद्धाओं की समाप्ति और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करने के लिए हमारे देश में, महाराष्ट्र में अनेकों ने बहुत प्रयास किए हैं। केरला के डॉ. अब्राहम कोवूर भारत के अंधश्रद्धा निर्मूलन आंदोलन के प्रणेता रहे। उन्होंने दैवी सामर्थ्य से चमत्कार दिखानेवालों को जाहिर चुनौती दी। उनके लिए एक लाख रूपयों का पुरस्कार घाषित किया। तथा इन पाखंडियों के

ढोंग को खोलकर रखा। उनकी जिंदगी में अथवा उनकी मृत्यु के बाद आज तक किसी ने भी इस चुनौती को स्वीकार नहीं किया।

अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति–

महाराष्ट्र में महाराष्ट्र अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति गत अनेक वर्षों से विविध उपक्रमों का आयोजन कर रही है। वह अंधरद्धा निर्मूलन के लिए निरंतर प्रयास कर रही है। इससे सुकून मिलता है।

महाराष्ट्र के ग्रामीण इलाकों में मानवलोक, हैलो मेडिकल फाउंडेशन, महाराष्ट्र आरोग्य मंडल जैसी संस्थाएँ अनेक वर्षों से आरोग्यविषयक जागृति का काम कर रही हैं।

लोकविज्ञान संगठन– लोकविज्ञान संगठन विज्ञान को आम जनता तक पहुँचाने के लिए, विज्ञान को जन आंदोलन बनाने के लिए गत अनेक वर्षों से कार्यरत है। विज्ञान और जनता का अंतर कम हो, विज्ञान जीवनदृष्टि बनकर जनता में पनपे, इसलिए सूर्यमेला, विज्ञान मेला, वैज्ञानिक वस्तुओं की प्रदर्शनियाँ, विज्ञान सम्मेलन, प्रादेशिक भाषाओं में विज्ञान विषयक जानकारी की प्रसिद्धि, विज्ञान विषय के लिए समर्पित पत्रिकाएँ, चित्र प्रदर्शनियाँ, स्लाईड–शो, गीत–संवाद, पथनाट्य आदि विविध उपक्रमों से विज्ञान को जनता तक ले जाने का प्रयत्न लोकविज्ञान संगठन ने निरंतर शुरू रखा है। अशिक्षित–अर्थशिक्षित लोगों में जाकर विज्ञान को लोकाभिमुख करने का लोकविज्ञान संगठन का प्रयत्न अत्यंत प्रशंससनीय और आशादायी है।

भारत जनविज्ञान जत्था–

विवकशील समाज की निर्मिति के लिए, वैज्ञानिकों को जनता तक पहुँचाने के लिए तथा लोकज्ञान को वैज्ञानिकों तक पहुँचाने के लिए भारत जनविज्ञान जत्थे के माध्यम से प्रयत्न शुरू हैं। लोकविद्यालय, विज्ञान बालमंच, विज्ञान युवा व्याससपीठ, विज्ञान सांस्कृतिक मंच आदि उपक्रमों के द्वारा जनसहयोग बढ़ाने के प्रयास भारत जनविज्ञान जत्थे ने किए हैं।

✷ ✷ ✷ ✷ ✷

4. निश्चित प्रश्न विनम्र उत्तर

समाज के वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आग्रही लोगों को कुछ लोगों से निश्चित प्रश्न पूछ जाते हैं। 'ईश्वर के बारे में आपका क्या ख्याल है? आप ईश्वर को मानते हैं या नहीं?।' यह प्रश्न हमेशा पूछा जाता है। परंतु वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आग्रही लोगों को इसका विनम्र परंतु ठोस उत्तर देना चाहिए।

1. ईश्वर को मानना, न मानना व्यक्तिगत बात है। परंतु उसके आधार पर ऐसा नहीं कहा जा सकता कि ईश्वर माननेवाला ही योग्य है और न माननेवाला अयोग्य। जो सिद्ध हुआ है उसे स्वीकराना और जो नहीं हुआ है उसे खोजते रहना ही विज्ञान सिखाता है। उसके आधार ईश्वर को स्वीकारने योग्य सबूत अभी तक अनुपलब्ध है। हजारों वर्षों के अध्ययन से अब मनुष्य विश्व–निर्मिति की, विश्व में घटित घटनाओं को प्रक्रियाओं को जान गया है। इसलिए ईश्वर नामक किसी त्रयस्थ शक्ति ने विश्व–निर्मिति की है और वही शक्ति आज भी विश्व का नियंत्रण कर रही है, इसके लिए कोई सबूत नहीं है। यह बात साबित भी नहीं हुई है।

'वैज्ञानिक दृष्टि से आज तक तो ईश्वर को नहीं खोज पाए हैं, फिलहाल वह गृहित अवस्था में या प्रयोगावस्था में हैं'– स्वातंत्र्यवीर सावरकरजी की यह टिप्पणी काफी मुखर है।

ईश्वर न माननेवाले को नास्तिक, देवधर्मविरोधी मानकर उसका तिरस्कार करना ठीक नहीं है। साथ ही कोई ईश्वर मानता है इसलिए उसका तिरस्कार करना ठीक नहीं है। साथ ही कोई ईश्वर मानता है इसलिए उसका तिरस्कार भी गैर है। यद्यपि 'ईश्वर' मनुष्य–निर्मित संकल्पना है, फिर भी प्राप्त परिस्थिति में विविध कारणों से सर्वसामान्य मनुष्य उस कल्पना का आधार लेकर जीवन जीते हैं, इस बात को समझ लेने की आवश्यकता है। इसी वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने में ईश्वर को मानना, न मानना जैसी पूर्व शर्त नहीं हो सकती। ईश्वर माननेवाले अधिकांश व्यक्तियों में भी धीरे–धीरे, प्रयत्नपूर्वक वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित किया जा सकता है।

2. दूसरा प्रश्न होता है, कि 'क्या सभी प्रश्नों के उत्तर बुद्धिवाद से मिल सकते हैं? उत्तर है 'जी, हाँ'। बृद्धिवाद तर्कसंगत विचार की आदत डालता है। तथा तर्कसंगत विचार से निश्चित ही सभी प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़े जा सकते हैं। अर्थात यदि बृद्धिवाद से सभी प्रश्नों के उत्तर पाए जा सकते हैं फिर भी इस प्रकार की जीवन दृष्टि को अपनाना कठिन होता है। समाज के सभी लोग, सभी प्रसंगों में बृद्धिवाद को अपनाएँगे सो बात नहीं। कुछ लोग ज्यादा संवेदनशील होते हैं।

उनकी भावनाओं को न नकारा जा सकता है, न ठेस पहुँचाई जा सकती है। ऐसे समय संयम की जरूरत होती है। उस व्यक्ति का द्वेष नहीं किया जा सकता। समाज के अधिकांश लोगों के द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का स्वीकार होने पर ही उनका और समूह का हित–साधन हो सकता है। इसलिए हमें वैज्ञानिक दृष्टकोण का निरंतर आग्रह रखना चाहिए। परंतु ऐसा करते समय ईश्वर माननेवाले किसी व्यक्ति की, अनावश्यक मार्ग ढूँढ़नेवाले व्यक्ति की आलोचना करने पर रोक लगानी चाहिए। इसका भान होना चाहिए कि बदलाव या परिवर्तन एक निरंतर चलनेवाली प्रक्रिया है।

हमेशा हमें बताना चाहिए कि ईश्वर माननेवाला व्यक्ति भी उसके दैनंदिन जीवन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपना सकता है। हमें सर्वसामान्य लोगों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रवृत्त करना चाहिए, उनका साथ देना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कठोर बृद्धिवाद का स्वीकार आज कुछ लोगों के व्यक्तिगत आचरण का मामला है, उसे सामूहिक स्तर पर जाने में समय लगेगा।

3. **विज्ञान किसलिए?** – अणुबम से हजारों लोगों का खातमा करने के लिए? वस्तुतः यह तीसरा प्रश्न भ्रममूलक है। लोगों को मारने की अनेकों की इच्छा नहीं रहती। अतः इस प्रकार का प्रश्न उभरने पर सर्वसामान्य मनुष्य विज्ञान–विरोधी मत व्यक्त करता है। ऐसे समय कहने की जरूरत होती है कि विज्ञान नीति–निरपेक्ष होता है। विज्ञान नैतिक–अनैतिक जैसा अंतर नहीं करता, वह 'न–नैतिक' होता है।

विज्ञान हमें आसपास में घटित घटनाओं का कार्यकारणभाव बताता है। साथ ही क्या करने पर क्या हो सकता है इसे भी स्पष्ट करता है। परंतु कोई बात की जाए तथा नहीं इसके बारे में मौन रहता है। अतः विज्ञान को नीति–निरपेक्ष अथवा न–नैतिक माना जाता है।

किसी बात को करने या न करने का मुद्दा नीति, विवके का होता है। इसलिए जब मनुष्य–समाज की समस्याओं को योग्य रीति से सुलझाने की बात उठती है तब विज्ञान के साथ विवके का विचार अत्यावश्यक रहता है।

विज्ञान ने अनेक असाध्य बीमारियों पर दवाएँ खोज निकालीं और अनेकों के प्राण बचाए हैं। साथ ही अणुबम निर्माण करके हजारों मासूम लोगों की हत्या भी की है। यद्यपि यह यथार्थ है फिर भी इसमें विज्ञान को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। अगर किसी का दोष है तो उसका गलत इस्तेमाल करनेवाले व्यक्तियों का।

विज्ञान ने ढूँढ निकाला कि अणु में प्रचंड शक्ति छिपी रहती है। उस अणुशक्ति के उपयोग से अणुभट्टी के जरिए विद्युत–निर्मिति करनी है या अणुबम बनाना है इसे निश्चित करने का अधिकार तो उसका इस्तेमाल करनेवालों का था। अतः आवश्यकता है कि विज्ञान को दोष न देते हुए उसका उपयोग करनेवालों के पास विवके का आग्रह रखा जाए। विवके के आधार पर उन्हें तय करना है कि विध्वंसक अण्वस्त्रों का निर्माण करना है या मानवी–जीवन को सुसह्य बनानेवाले अन्न, वस्त्र का। आज इस दृढ़ भूमिका को अपनाने की **जरूरत है कि विज्ञान को मानवी चेहरा प्राप्त हो। 'हिरोशिमा–फिर–से नहीं, यही भूमिका होनी चाहिए। जरूरत अणुअस्त्र की नहीं, अन्न और वस्त्र की है।**

4. यह भी पूछा जाता है कि 'जहाँ विज्ञान रूकता है, समाप्त होता है, उससे आगे क्या?' कुछ लोग बताते हैं कि जहाँ विज्ञान ठप हो जाता है वहाँ से आगे अध्यात्म शुरू हो जाता है। वस्तुतः यह प्रश्न भ्रममूलक है। ?

विज्ञान न कहीं रूकता है, न समाप्त होता है। उसकी सत्य की खोज निरंतर चलती रहती है। विज्ञान ऐसा कभी नहीं कहता कि मुझे यहाँ तक ही आकलन हुआ है और आगे का कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है। वैज्ञानिक नहीं कहते कि अब हम थक गए हैं अतः यहीं पर रूकते हैं। उनका अनुसंधान कार्य हमेशा जारी रहता है।

आज जो सिद्ध हुआ है उसे स्वीकारना और जो सिद्ध नहीं हुआ है उसकी खोज जारी रखना ही विज्ञान की कार्यपद्धति होती है।

5. अज्ञान के कारण ऐसी भी एक धारणा हेतुतः प्रसृत की जाती है कि 'विज्ञानधिष्ठित जीवनपद्धति याने भावशून्यता।' लेकिन यह तथ्यपूर्ण नहीं है। **विज्ञान भावनाओं का विरोध नहीं करता बल्कि भावों में बहकर सारासार बुद्धि को गिरवी रखने का विरोध करता है।**

अंधश्रद्धा का पालन करनेवाली माँ अपने बीमार बच्चे को मांत्रिक के पास ले जाएगी तो विज्ञानाधिष्ठित माँ उसे डॉक्टर के पास ले जाएगी। लेकिन क्या इससे यह अंतर किया जा सकता है कि अंधश्रद्धा से युक्त माँ भावप्रधान है और विज्ञाननिष्ठ माँ भाव–शून्य है?

वैज्ञानिक भाव–शून्य नहीं होते। विज्ञान की सारी कोशिश अधिकाधिक लोगों को अधिकाधिक सुखी, समृद्ध जीवन दिलाने की रहती है।

बुद्धिवाद के द्वारा सभी प्रश्नों के उत्तर प्राप्त होना संभव नहीं है। ऐसी भी एक धारणा! बीसवीं सदी से उत्तर आधुनिकता (post-modernity) की प्रस्तुति है कि मानवी मन और भावनाएँ भी प्रभावशाली भूमिकाएँ अदा करते हैं। मस्तिष्क के साथ हृदय भी आवश्यक है। इस प्रस्तुति का संकेत है कि मानवी भावनाओं को नकारा नहीं जा सकता। परंतु मन, भावना आदि का अतिरेक मूलतत्ववाद के घातक छोर तक पहुँचने की आशंका ही अधिक है।

मानवी मन, भावना आदि की ओर ध्यान देकर भी सभी प्रश्नों की ओर बुद्धिवादी भूमिका से देख सकते हैं और प्रश्नों के उत्तर ढूँढ सकते हैं, ढूँढ ने का प्रयास कर सकते हैं। बुद्धिवाद स्वीकारना हमेशा श्रेयस्कर ही होता है।

मनुष्य की मनुष्यता भी बुद्धिवाद की भूमिका द्वारा पालित–पोषित हो सकती है। उसके लिए अन्य पर्यायों की आवश्यकता ही नहीं है।

5. विद्यमान प्रश्न तथा विज्ञान

दुनिया तथा हमारे देश के सामने आज अनेक समस्याएँ हैं : जनसंख्या के विस्फोट को रोकना, बढ़ती हुई आबादी को पानी, अन्न, वस्त्र, आवास, स्तरीय शिक्षा, योग्य आरोग्य–सुविधा आदि अल्पतम मूलभूत आवश्यकताओं को उपलब्ध कराना चाहिए। हमें अनेक गंभीर समस्याओं के उत्तर भी खोजने हैं, यथा–दारिद्य निर्मूलन, विषमता निर्मूलन, धार्मिक, आर्थिक आतंकवाद, हिंसाचार, प्रदूषण, पर्यावरण रक्षा आदि।

हमारे देश के सामने तो इन मूलभूत समस्याओं के साथ अनेक समाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक चुनौतियाँ भी हैं। जातीयता, स्त्री–पुरूष विषमता, धर्मांधता, भावनाओं को उकसानेवाली गंदी राजनीति, बढ़ती असहिष्णुता, मंदिर–मस्जिद के भावनात्मक प्रश्नों के जरिए देश की एकात्मता को दी जानेवाली चुनौती, देश के सार्वभौमत्व पर आघात करने वाला वैश्विकीकरण आदि अनेक चुनौतियों का हमें मुकाबला करना पड़ेगा। इन प्रश्नों के उत्तर सोजते समय आधुनिक विज्ञान–तंत्रज्ञान के सहारे ही आगे बढ़ना होगा। इससे अधिक अच्छा पर्याय आज उपलब्ध नहीं है। क्योंकि यह वास्तव है कि मनुष्यों की मूलभूत समस्याओं को सुलझाने की क्षमता सिर्फ विज्ञान में है। उसके साथ तंत्रज्ञान के अनुसंधान की दिशा कौन–सी होनी चाहिए? प्रमुखता किन बातों को दी जानी चाहिए? आदि संदर्भों में तथा विज्ञान के गलत इस्तेमाल पर रोक लगाने के लिए सुस्पष्ट, आग्रही भूमिका की नितांत आवश्यकता है। 'खेती' अनुसंधान का केंद्रीय विषय होना जरूरी है। साथ

ही रोजगार की उपलब्धता में कमी न आकर वह कैसे बढ़ सकती है इसका भी विचार आवश्यक है।

विज्ञान और तंत्रज्ञान–

विज्ञान और तंत्रज्ञान दो अलग–अलग बातें है। विज्ञान बताता है कि किण्वन प्रक्रिया में सूक्ष्मजीवों की श्वसन–प्रक्रिया से कार्बन डाय–ऑक्साईड वायु तथा अन्य रासायनिक पदार्थ तैयार होते हैं। इसी तत्त्व का उपयोग करके प्रत्यक्ष कारखानों में विविध यंत्रों के प्रयोग से प्रतिजैविक, विटामिन और अल्कोहोल की निर्मिति को तंत्रज्ञान कहा जाता है।

आज विज्ञान के मूलभूत सिद्धांतों की अपेक्षा तंत्रज्ञान की चर्चा ही अधिक होती है। व्यक्तिगत जीवन को अधिकाधिक सुखी बनाना ही अनुसंधान की दिशा रही है। सार्वजनिक दृष्टि से उपयुक्त वस्तुओं का अन्वेषण दुर्लक्षित हो रहा है। पूँजीवादी वर्ग ही विज्ञान तथा तंत्रज्ञान का बड़े पैमाने पर उपयोग कर रहा है। औषधि–विज्ञान के क्षेत्र में तो वैज्ञानिक तत्त्वों का आभास निर्माण कराके अधिकाधि कमहँगी तथा शरीर के लिए बाधक औषधियाँ निर्माण की जा रही हैं, बेची जा रही हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ वैज्ञानिक युक्तियों के प्रयोग से गरीबों को धोखा दे रही हैं। इसे टोकने के लिए इसके विरोध में आवाज उठाने की जरूरत है।

समस्या व्यक्तिगत हो या सामूहिक उसे सुलझाते समय चाहिए कि मनुष्य अन्य किसी की शरण में न जाते हुए अपनी बुद्धि के वश हो जाए। 'बुद्धिं शरणं गच्छामि' की वृत्ति, विवके अपनाए। अपनी चिकित्सक वृत्ति बनाए रखे। हर घटना के कार्यकारणभाव को समझ ले। इसी में उस व्यक्ति का, अर्थात देश का हित है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रभावित नागरिकों की बढ़ती संख्या से ही प्रगति संभव है। इसमें संदेह नहीं कि समताधिष्ठित समाज तथा बलशाली भारत की निर्मिति का स्वप्न विज्ञान के जरिए ही प्रत्यक्ष हो पाएगा।

✷ ✷ ✷ ✷ ✷